A Pratibha Spandan Journal
SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 02, July-December, 2025

उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ: परंपरा, वादन–वैशिष्ट्य और भारत में तबले के विस्तार का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

अजय शर्मा
(तबला संगतकार), शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर माधव संगीत महाविद्यालय, उज्जैन, मध्य प्रदेश।

OPEN ACCESS CC BY

सारांश
उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ साहब भारतीय तबला–परंपरा के उन विशिष्ट महानायकों में सम्मिलित हैं, जिन्होंने न केवल अपने वादन से लखनऊ और फ़र्रुख़ाबाद घरानों की सौंदर्यपरक परंपराओं को नई ऊँचाई दी, बल्कि पूरे भारत में तबले के प्रसार को एक सशक्त दिशा भी प्रदान की। उनका संगीत–व्यक्तित्व व्यापक गुरुपरंपरा, गहन साधना, मधुर स्वभाव और विलक्षण रचनात्मकता का संगम था। विभिन्न घरानों की विशेषताओं को आत्मसात करते हुए ख़ाँ साहब के वादन में नफ़ासत, स्पष्ट उच्चारण, लय की सूक्ष्म समझ और प्रस्तुति की गरिमा समान रूप से दृष्टिगोचर होती है। उनकी विस्तृत शिष्य-परंपरा, विविध राज्यों में फैला तबला-प्रसार, अद्वितीय रचनाएँ तथा मंच–अनुभव न केवल उन्हें इतिहास में विशिष्ट स्थान प्रदान करते हैं, बल्कि भारतीय ताल-विधान के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण संदर्भ भी बनाते हैं। यह लेख उनके जीवन, संगीत–यात्रा, घरानेदार शैली, प्रमुख रचनाओं और समकालीन संगीत-परिदृश्य पर उनके प्रभाव का क्रमबद्ध एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है, जिससे उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ साहब के योगदान का व्यापक परिप्रेक्ष्य स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आता है।

मुख्य शब्द : *उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ, लखनऊ घराना, फ़र्रुख़ाबाद घराना, तबला वादन परंपरा, शिष्य-परंपरा, भारतीय ताल–संगीत।*

प्रस्तावना

भारतीय शास्त्रीय संगीत में ताल की परंपरा केवल लय का विन्यास नहीं बल्कि एक सांस्कृतिक अनुभव है, जिसने सदियों से गायन, वादन और नृत्य, तीनों विधाओं को स्थिर आधार दिया है। इन्हीं परंपराओं के बीच तबला एक ऐसा वाद्य बना, जिसकी विकसित होती तकनीक और घरानेदार रचनाओं ने ताल-संरचना को नए आयाम दिए। पूरब बाज की नफ़ासत, लखनऊ और फ़र्रुख़ाबाद घरानों की विनम्रता, बनारस की सहजता और संगत की परंपरा, इन सभी का सम्मिलित रूप जब किसी कलाकार की साधना में रचने-बसने लगता है, तब वह कलाकार स्वयं एक परंपरा का स्वरूप बन जाता है। उस्ताद जहाँगीर खाँ साहब इसी जीवंत परंपरा के ऐसे प्रतिनिधि थे, जिन्होंने न केवल तबले की तकनीक को नई संवेदना दी बल्कि उसके सामाजिक और सांस्कृतिक अर्थों को भी विस्तृत किया।

उस्ताद जहाँगीर खाँ की कला का महत्व केवल उनके दीर्घ जीवन, बहु-गुरु परंपरा या अनगिनत शिष्यों में नहीं, बल्कि उस दृष्टि में है जिसने तबले को एक सीमित संगत वाद्य से आगे बढ़ाकर स्वतंत्र, अभिव्यक्तिपूर्ण और सौंदर्य-आधारित वादन की दिशा दी। इंदौर, बनारस, लखनऊ और महाराष्ट्र से लेकर दक्षिण भारत और राजस्थान तक, उनकी वादन-शैली का प्रभाव जिस तरह फैलता गया, वह यह बताता है कि उनकी कला केवल तकनीकी दक्षता का परिणाम नहीं थी, बल्कि एक ऐसी सांस्कृतिक यात्रा थी जिसने अनेक क्षेत्रों की संगीत-परंपराओं को जोड़ने का काम किया। उनकी रचनाएँ, मंच-प्रस्तुतियाँ, शिष्य परंपरा और बाद के समय में प्राप्त संस्थागत सम्मान यह संकेत देते हैं कि उस्ताद जहाँगीर खाँ का योगदान भारतीय ताल-परंपरा के इतिहास में एक स्थायी बिंदु के रूप में स्थापित हो चुका है।

यह लेख उस्ताद जहाँगीर खाँ साहब के जीवन, उनकी तकनीक, उनकी रचनात्मक परंपरा और भारत में तबले के विस्तार में उनके विशिष्ट योगदान को शोध-आधारित दृष्टि से समझने का प्रयास है। ऐतिहासिक स्रोतों, जीवनी-संदर्भों, फोटोग्राफ़िक प्रमाणों, रचनाओं और शिष्य-परंपरा के आधार पर प्रस्तुत अध्ययन पाठक को न केवल उनके संगीत-संसार से परिचित कराएगा बल्कि यह भी दिखाएगा कि कैसे एक कलाकार अपनी साधना से पूरी परंपरा को नई दिशा दे सकता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं जीवनपरिचय

उस्ताद जहाँगीर खाँ का जन्म लगभग 1869 में वाराणसी में एक ऐसे परिवार में हुआ जहाँ संगीत दैनिक जीवन का हिस्सा था। उनके पिता जनाब अहमद खाँ स्वयं एक दक्ष कलाकार थे, जिनसे उन्हें बचपन में ही तबले की पहली तालीम मिली (Shrivastav, n.d.; Mishra, n.d.)। यही पारिवारिक वातावरण आगे चलकर उनके पूरे कलात्मक विकास की नींव बना। कुछ स्रोत उनके जन्म वर्ष को 1864 भी बताते हैं, जिससे स्पष्ट होता

है कि उनके जीवन-काल को लेकर कुछ विविध मत हैं, किंतु यह तथ्य निर्विवाद है कि उनका आरंभिक संगीत-जीवन बनारस की समृद्ध सांगीतिक भूमि पर ही विकसित हुआ (Tablapassion, n.d.)।

गुरुओं के संदर्भ में उस्ताद जहाँगीर खाँ की तालीम बेहद विविध और व्यापक थी। पिता से प्रारम्भिक प्रशिक्षण के बाद उन्होंने पटना के उस्ताद मुबारक अली, बरेली के उस्ताद छन्नू खाँ, दिल्ली के फ़िरोज़शाह, लखनऊ के ख़लीफ़ा आबिद हुसैन खाँ तथा बनारस के बीरू मिश्र जैसे सिद्धहस्त उस्तादों से शिक्षा प्राप्त की (Mishra, n.d.; Shrivastav, n.d.)। इस बहु-गुरु परंपरा ने उन्हें किसी एक घराने की सीमाओं में बंधने नहीं दिया; बल्कि उन्होंने लखनऊ और फ़र्रुख़ाबाद घराने के विशेष गुणों को गहराई से आत्मसात कर अपनी वादन-शैली में एक विशिष्ट बहु-घराना रूप विकसित किया (Tablapassion, n.d.)।

उनकी तालीम की पद्धति पारंपरिक गुरु-शिष्य परंपरा पर आधारित थी, जिसमें कठोर अभ्यास, बोलों की साफ़ उच्चारण कला और लय-नियंत्रण की सूक्ष्म समझ पर विशेष ध्यान दिया जाता था। शुरुआती वर्षों में उन्होंने कई प्रमुख कलाकारों के साथ संगत की, जिनमें विशेष रूप से संगीत सम्राट उस्ताद रज्जब अली खाँ का साथ उल्लेखनीय है। इस लंबे सान्निध्य ने उन्हें ख़याल गायन की सूक्ष्मताओं के अनुरूप संगत-शैली विकसित करने में मदद की (Shrivastav, n.d.)। लगभग 1911 में महाराज तुकोजीराव होलकर, इंदौर ने उनके वादन से प्रभावित होकर उन्हें दरबारी वादक नियुक्त किया, जिसके बाद इंदौर ही उनकी स्थायी कर्मभूमि बना (Mishra, n.d.)।

चित्र 1. 1इंदौर में 'अभिनव कला समाज' द्वारा आयोजित एक संगीत कार्यक्रम के अवसर पर उस्ताद जहाँगीर खाँ

सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश का प्रभाव उनके जीवन में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। बनारस की पारंपरिक सांगीतिक विरासत, इंदौर का दरबारी संरक्षण, और बीसवीं सदी के मध्य में उभरते संगीत-संस्थानों तथा सांस्कृतिक संगठनों ने उनकी कलात्मक यात्रा को निरंतर दिशा दी (Yadav, n.d.)। यद्यपि जीवन के अधिकांश वर्षों में आर्थिक कठिनाइयाँ बनी रहीं, फिर भी उनके कला-योगदान को समय-समय पर बड़े सम्मान, जैसे राष्ट्रपति सम्मान, संगीत नाटक अकादमी की फैलोशिप और खैरागढ़ विश्वविद्यालय से मानद डॉक्टरेट (Mishra, n.d.; Shrivastav, n.d.) प्राप्त हुए। उनके जीवन के अंतिम चरणों की कुछ ऐतिहासिक झलकियाँ, जैसे 1974–75 का इंदौर का चित्र, आज उनके व्यक्तित्व और उस समय के संगीत वातावरण को समझने में महत्वपूर्ण स्रोत मानी जाती हैं (Mudgal, 2020)।

यह चित्र इंदौर में 'अभिनव कला समाज' द्वारा आयोजित एक संगीत कार्यक्रम के अवसर का है। चित्र में कुर्सी पर बैठे हुए व्यक्तित्व स्वयं तबला के प्रख्यात उस्ताद जहाँगीर खाँ हैं। उनके साथ उपस्थित अन्य विद्वत् संगीतज्ञों और कलाकारों में शुभा मुद्गल, उनकी माता जया गुप्ता, तथा बहन रागिनी भी सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त, शेरवानी और टोपी पहने हुए गरिमामय व्यक्तित्व प्रो० लालजी श्रीवास्तव हैं। इस चित्र का महत्व केवल ऐतिहासिक संदर्भ में ही नहीं, बल्कि उस्ताद जहांगीर ख़ान की कलात्मक उपस्थिति तथा उस समय के संगीत–परिदृश्य की जीवंत झलक के रूप में भी अत्यंत मूल्यवान है।

भारत में तबले के विस्तार में योगदान

उस्ताद जहाँगीर खाँ ने भारत में तबले के प्रसार को जिस व्यापकता और गंभीरता से आगे बढ़ाया, वह उनकी दूरदर्शिता और समर्पण को स्पष्ट करता है। इंदौर में दीर्घकालिक निवास के दौरान उन्होंने न केवल अपनी वादन-शैली को संवारा, बल्कि उसे एक ऐसी शैक्षिक परम्परा में रूपांतरित किया

जिसके माध्यम से कई राज्यों में तबला-शिक्षा का नेटवर्क विकसित हुआ (Shrivastav, n.d.; Mishra, n.d.)। यह विस्तार केवल औपचारिक प्रशिक्षण तक सीमित नहीं था; उन्होंने ताल-संरचना, बोलों की स्पष्टता और घरानदार वादन को इस प्रकार सिखाया कि आगे चलकर उनके शिष्य स्वयं अपने-अपने क्षेत्रों में परम्परा के संवाहक बन गए (Yadav, n.d.)।

दक्षिण भारत में तबले का विस्तार उस्ताद महबूब ख़ाँ मिरजकर और उनके शिष्य उस्ताद शेख दाऊद ख़ाँ के माध्यम से अत्यंत प्रभावी हुआ। दाऊद ख़ाँ ने जहाँगीर खाँ की पारंपरिक तालीम और लखनऊ घराने की नफ़ासत को हैदराबाद और उसके आसपास की संगीत-संस्कृति में स्थापित किया, जिससे दक्षिण भारत में तबले की एक सुदृढ़ शाखा प्रसारित हुई (Yadav, n.d.)। इसी प्रकार हबल्ली, धारवाड़ और आसपास के शहरों में उनके शिष्यों, जैसे शेषगिरी हंगल और गजानन गुरव, ने परम्परा को जीवंत बनाए रखा।

महाराष्ट्र में उस्ताद जहाँगीर खाँ के प्रभाव की गहराई और विस्तार विशेष रूप से उल्लेखनीय है। महबूब ख़ाँ मिरजकर और उनके शिष्यों ने महाराष्ट्र के कई नगरों, मिरज, पुणे, सांगली, सतारा, अकोला, कोल्हापुर आदि, में लखनऊ घराने की तबला-शैली को स्थापित किया। गोविंदराव विलाइची, मधुकर गोडबोले, पांडुरंग, रमाकांत देवलेकर, बाबासाहेब मिरजकर, सुरेशभाई गायतोंडे जैसे अनेक कलाकार इस परम्परा को आगे बढ़ाने में प्रमुख रहे (Yadav, n.d.)। इस प्रकार महाराष्ट्र तबला-परम्परा का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना, जो आज भी सक्रिय रूप से विकसित हो रहा है।

मध्यप्रदेश में उस्ताद आबिद हुसैन खाँ की परम्परा से जुड़कर जहाँगीर खाँ ने लखनऊ घराने को इंदौर और उससे आगे पूरे क्षेत्र में स्थापित किया। इंदौर के दिनकर मजूमदार, शरद खरगोंकर, शंभुनाथ खरगोंकर तथा भोपाल के इस्माइल दद्दु खाँ जैसे कलाकारों ने उनके मार्गदर्शन में वादन-कौशल विकसित किया और आगे नई पीढ़ी को शिक्षा दी (Yadav, n.d.)। मध्यप्रदेश में तबले की संस्थागत पहचान को विकसित करने में उनका योगदान बाद में संगीत-विश्वविद्यालयों और सांस्कृतिक संस्थानों के माध्यम से और अधिक सुदृढ़ हुआ।

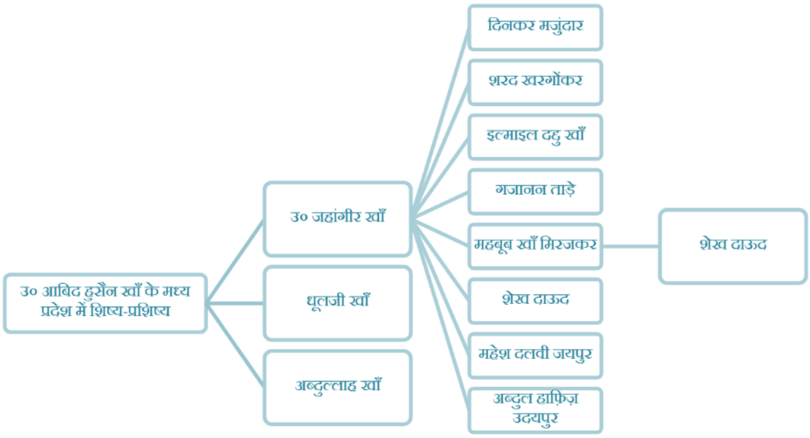

चित्र 1. 2 मध्यप्रदेश में उस्ताद आबिद हुसैन खाँ की परम्परा

राजस्थान में भी उस्ताद जहाँगीर खाँ का प्रभाव गहरा रहा। जयपुर के महेश दलवी और उदयपुर के उस्ताद अब्दुल हाफ़िज़ खाँ ने लखनऊ घराने की शैली को वहाँ स्थापित किया (Yadav, n.d.)। अब्दुल हाफ़िज़ खाँ के शिष्य पंडित चतुरलाल ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तबले की पहचान को बढ़ाया, जिससे जहाँगीर खाँ की वंशपरम्परा का अप्रत्यक्ष विस्तार विश्व-संगीत के मंच तक हुआ। यह विस्तार केवल वादन तक सीमित नहीं था बल्कि सांस्कृतिक आयोजनों, संगीत-सम्मेलनों और राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रमों में भी दिखाई देता है, जहाँ उनके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष शिष्य परम्परा को आगे बढ़ाते रहे (Mishra, n.d.)।

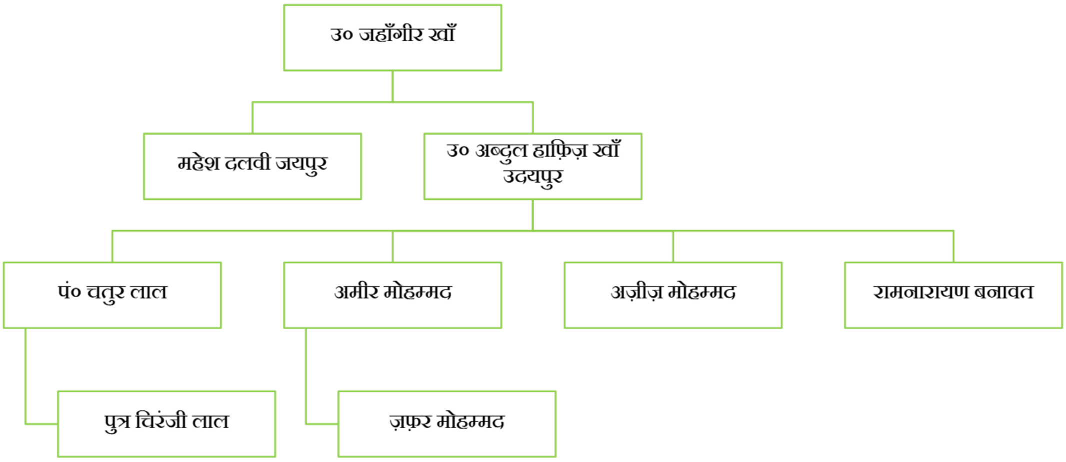

चित्र 1. 3 उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ की शिष्य परंपरा

इन सभी आयामों को देखते हुए स्पष्ट होता है कि उस्ताद जहाँगीर खाँ ने भारत में तबले के विस्तार को एक व्यापक और बहुस्तरीय रूप दिया। उन्होंने शिष्यत्व, संस्थानों, क्षेत्रीय सांस्कृतिक वातावरण और संगीत-सम्मेलनों के माध्यम से न केवल अपनी घरानेदार शैली को संरक्षित किया बल्कि उसे अनेक प्रदेशों की संगीत-संस्कृति में गहराई से स्थापित किया।

प्रमुख रचनाएँ और उनका विश्लेषण

उस्ताद जहाँगीर खाँ द्वारा प्रदर्शित बंदिशें उनके वादन-स्वरुप की गहराई, बोल-संरचना और लखनऊ व फ़र्रुख़ाबाद घरानों की सौंदर्य-कला को संयुक्त रूप से प्रकट करती हैं। प्रत्येक रचना में लय, संरचना और तकनीकी संतुलन का ऐसा संयोजन मिलता है जो उनके व्यक्तिगत अभ्यास, गुरुपरंपरा और रचनात्मक दृष्टि को स्पष्ट करता है। आगे प्रस्तुत विश्लेषण इन रचनाओं के बोल-स्वरूप, लय-व्यवस्था, सौंदर्य मूल्य और उनके ऐतिहासिक-सांगीतिक महत्व को क्रमबद्ध रूप में समझने का प्रयास करता है।

तीनताल में दीपचन्दी अंग क़ायदा –

धाति ऽ धा धा तिरकिट धाति धा घेड़नग धिंनगिन धा धा धा तिरकिट धा धा तिरकिट धा घेड़नग तिनगिन |

x

ताति ऽ ता ता तिरकिट ताति ता केड़नग तिनगिन धा धा धा तिरकिट धा धा तिरकिट धा घेड़नग धिंनगिन |

2

धाति ऽ धा धा तिरकिट धाति धा घेड़नग धिंनगिन धा धा धा तिरकिट धा धा तिरकिट धा घेड़नग तिनगिन |

o

ताति ऽ ता ता तिरकिट ताति ता केड़नग तिनगिन धा धा धा तिरकिट धा धा तिरकिट धा घेड़नग धिंनगिन |

3

उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ द्वारा प्रस्तुत यह कायदा विशेष रूप से *मिश्र जाति* का अनुकरण करता है, जो इसके बोलों की संरचना और लयात्मक प्रवाह में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। *"धाति धा धा तिरकिट"* तथा *"धाति धा घेड़नग धिंनगिन"* जैसे बोल इसके मूल को स्थापित करते हैं। इसमें विविध संगत बोल इसके विस्तार तथा जाति की तकनीकी विशेषताओं को दर्शाते हैं। यह रचना न केवल उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ की रचनात्मक सोच को प्रतिबिंबित करती है, बल्कि मिश्र जाति पर आधारित कायदा निर्माण की शास्त्रीय परंपरा को भी प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करती है।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 02, July-December, 2025

तीनताल में क़ायदा –

धाऽक्रधा	तिधागेन	क्रधातिधा	गेन तिंना	किडनग तिरकिट	तकताऽतिरकिट	धातिधागे	नधा तिरकिट
x				2			
धाऽक्रधा	तिधा तिरकिट	धात्तिऽधा	गेन तिंना	किडनग तिरकिट	तकताऽतिरकिट	धातिधागे	तिनागिना
o				3			
ताऽक्रता	तितागेन	क्रतातिता	गेन तिंना	किडनग तिरकिट	तकताऽतिरकिट	तातितागे	नता तिरकिट
x				2			
धाऽक्रधा	तिधा तिरकिट	धात्तिऽधा	गेन तिंना	किडनग तिरकिट	तकताऽतिरकिट	धातिधागे	धिनागिना
o				3			

उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ साहब से संबंधित यह क़ायदा एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक धरोहर है। श्री हितेन्द्र दिक्षित द्वारा प्रस्तुत किया गया यह क़ायदा लगभग सौ वर्ष या उससे भी अधिक पुराना माना जाता है। उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ साहब ने इसे अपने शिष्य पंडित दिनकर मजुमदार जी को दिया। तत्पश्चात् पंडित मजुमदार जी ने इसे अपने शिष्य श्री भोपटकर काका को सुपुर्द किया, जिन्होंने इसे विरल एवं दुर्लभ रचनाओं में से एक बताया।

यह क़ायदा केवल घराने की परंपरा का एक महत्वपूर्ण प्रतीक ही नहीं, बल्कि ताल-विन्यास, आघात-प्रयोग और रचनात्मक संवहन की गुरु-शिष्य परंपरा का जीवंत उदाहरण भी है।

तीनताल में चक्रदार – तीनताल में निबद्ध यह चक्रदार रचना, श्रीमती संगीता मुझुमदार द्वारा प्रस्तुत एक उत्कृष्ट तबला एकल वादन से है, जो 21 सितम्बर 2019 को अभिजात म्यूज़िक फ़ोरम द्वारा आयोजित *लोनावाला-खंडाला रेज़िडेंशियल संगीत सम्मेलन* (LKSS-19) में प्रस्तुत किया गया था (Mujumdar, 2019)। इस प्रस्तुति में कलाकार ने परंपरागत बोल-संरचनाओं, द्रुतगति, नज़ाकतपूर्ण तथा लयकारी के संतुलित प्रयोग के माध्यम से तीनताल की विविध संभावनाओं को अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त किया। प्रस्तुत रचना इसी प्रस्तुति से उद्धृत है:

क्रधिंऽन्	नगतक	तिरकिट	दिनतक	घेऽतिरकिटतक	ताऽऽऽ धिरधिर	किटतक ताऽतिर	किटतक ताऽऽऽ
x				2			
घिडऽन् किटतक	नगतिरकिटतक	धिरधिर किटतक	ताऽऽऽ	धाऽकिटतक	दीऽघेडनग	तिरकिटतक	तकतिरकिट
o				3			
धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ
x				2			
धाऽऽऽ	धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ
o				3			
कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ	धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ
x				2			
तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ	क्रधिंऽन्	नगतक	तिरकिट	दिनतक	घेऽतिरकिटतक
o				3			
ताऽऽऽ धिरधिर	किटतक ताऽतिर	किटतक ताऽऽऽ	घिडऽन् किटतक	नगतिरकिटतक	धिरधिर किटतक	ताऽऽऽ	धाऽकिटतक
x				2			

दीऽघेडनग	तिरकिटतक	तकतिरकिट	धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ
o				3			
घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ	धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्
x				2			
धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ	धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक
o				3			
तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ	क्रधिंऽन्	नगतक
x				2			
तिरकिट	दिनतक	घेऽतिरकिटतक	ताऽऽऽ धिरधिर	किटतक ताऽतिर	किटतक ताऽऽऽ	घिडऽन् किटतक	नगतिरकिटतक
o				3			
धिरधिर किटतक	ताऽऽऽ	धाऽकिटतक	दीऽघेडनग	तिरकिटतक	तकतिरकिट	धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक
x				2			
तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ	धिरधिर किटतक
o				3			
ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ	धाऽऽऽ
x				2			
धिरधिर किटतक	ताऽतिरकिटतक	तिरतिर किटतक	तक कड़ाऽन्	धाऽतिऽ	घेऽनाऽ	तूऽनाऽ	कऽत्ताऽ
o				3			
धाऽ							
x							

उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ द्वारा प्रस्तुत यह चक्रदार रचना लयकारी, बोल-संयोजन और संरचनात्मक स्पष्टता का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। गतिमानता, नजाकत और संतुलन, तीनों गुण इस इसमें समान रूप से प्रवाहित होते हैं। रचना की शुरुआत *"क्रधिंऽन्, नगतक, तिरकिट, दिनतक"* जैसे स्पष्ट बोलों से होती है, जो प्रवाह को प्रारंभिक स्तर से ही स्थापित करते हैं। *"घेऽ तिरकिटतक, ताऽऽऽ धिरधिर, किटतक ताऽतिरकिटतक"* जैसे संयुक्त बोल पारंपरिक लखनऊ–फ़र्रुख़ाबाद शैली की तकनीकी बारीकियों को प्रस्तुत करते हैं। पूरी रचना में बोलों की आवृत्ति में उनका पुनःप्रयोग, तथा *धिरधिर, तिरतिर, किटतक, कड़ाऽन्* जैसे विन्यास रचना को एक परिपक्व और क्रमबद्ध रूप प्रदान करते हैं। तिहाई में *धाऽतिऽ घेऽनाऽ तूऽनाऽ कऽत्ताऽ* जैसे बोलों का उपयोग स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि कलाकार ने तिहाई-सदृश विन्यास, सम पर पहुँचने की सजगता तथा लय-विस्तार की नियंत्रित ऊर्जा को मुख्य आधार बनाया है। तिहाई द्वारा यह बोल विन्यास न केवल समापन बिंदु को बल देती है, बल्कि संपूर्ण प्रस्तुति को एक सौंदर्यपूर्ण विराम भी प्रदान करती है। संक्षेप में, यह रचना उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ की बोल-संरचना, लयबोध, लयकारी-संतुलन, और परम्परा व प्रयोगशीलता के सुंदर समन्वय का सशक्त उदाहरण है, जिसमें तीनताल की शास्त्रीय गरिमा और द्रुतगति की निपुणता एक साथ प्रत्यक्ष होती है।

निष्कर्ष

उस्ताद जहाँगीर खाँ साहब का समग्र संगीत-व्यक्तित्व भारतीय ताल–परंपरा की उस विरासत का द्योतक है, जिसमें परंपरा, नवोन्मेष और साधना तीनों समान रूप से विकसित होते हैं। उनके वादन में लखनऊ और फ़र्रुख़ाबाद घरानों की नफ़ासत के साथ वह व्यापकता भी दिखाई देती है, जिसने उन्हें भारतीय संगीत जगत का एक विशिष्ट स्तंभ बना दिया। विभिन्न गुरुओं से प्राप्त गहन तालीम, दीर्घ साधना और सौंदर्य-बोध ने उनके वादन को ऐसी परिपक्वता दी, जिसे आज भी संगीत–विदों द्वारा आदरपूर्वक उद्धृत किया जाता है। उनकी रचनाएँ, पेशकार, ग़तें और लयकारी न केवल तकनीकी दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि ताल की अभिव्यक्ति की एक सांस्कृतिक संवेदना भी प्रस्तुत करती हैं।

भारत के अनेक क्षेत्रों, विशेषकर मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, दक्षिण भारत और राजस्थान, में तबले के प्रसार में उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। उनकी शिष्य-परंपरा ने जिस प्रकार अलग-अलग क्षेत्रों की संगीत-संरचनाओं में नई ऊर्जा भरी, वह बताता है कि उस्ताद जहाँगीर खाँ केवल एक कलाकार नहीं, बल्कि ताल–परंपरा के प्रसारक और संस्कारक भी थे। उनके द्वारा प्रशिक्षित वादकों ने आगे चलकर जिन शैलियों को विकसित किया और जिन संस्थानों की स्थापना की, उनसे आधुनिक समय में भी उनकी परंपरा सजीव और सक्रिय बनी हुई है।

आज, जब हम उनके जीवन, वादन–विशेषताओं और रचनात्मक धरोहर का अध्ययन करते हैं, तो स्पष्ट होता है कि उस्ताद जहाँगीर खाँ साहब ने न केवल अपने समय में तबले की कला को उच्चतम स्तर पर प्रतिष्ठित किया, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी एक सुदृढ़ आधार तैयार किया। उनकी विरासत स्मृति, शैली और साधना, इन तीनों रूपों में जीवित है, और भारतीय शास्त्रीय संगीत की भविष्य की दिशा को भी प्रेरित करती रहेगी।

संदर्भ

Dixit, H. (2020, Aprail 7). This kayda, must be a hundred or more years old... Facebook.https://www.facebook.com/groups/2398862665/posts/10157206005462666/

Gopikrishna, K. G. Origin, development and compositional styles in Hindustani tabla and Carnatic mridangam: A comparative study (Doctoral thesis, Karnatak University, Dharwad).

Mishra, V. S. Art and Science of Playing Tabla.
(उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ के जीवन, प्रशिक्षण एवं वादन पर विस्तृत विवरण।)

Mudgal, S. [@smudgal]. (2020, April 22). This photograph is probably from about 1974 or 1975… [Photograph]. Instagram. https://www.instagram.com/p/CIBHgplppJB/

Mujumdar, S. (2019, September 21). Solo tabla recital – LKSS.19 [Video]. YouTube. https://www.youtube.com/watch?v=iACtG4z4Lvs

Shrivastav, G. Taal Kosh (p. 76).
(उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ से संबंधित जीवनी विवरण।)

Tabla Passion. Jahangir Khan [Web article].
https://tablapassion.yolasite.com/jahangir-khan.php

यादव, संध्या. वादन वैशिष्ट्य के आधार पर पूरब बाज के अंतर्गत आने वाले तीनों घरानों (लखनऊ, फर्रुखाबाद तथा बनारस) का विवेचनात्मक अध्ययन [शोध–प्रबंध, इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़].
(उस्ताद जहाँगीर ख़ाँ की शिष्य–परंपरा और क्षेत्रवार विस्तार पर सामग्री।)